जैव विकास 4: किसका पलड़ा भारी - वंशानुगत या उपार्जित गुणधर्म?

माधव गाडगिल

बाज़ की पैनी नज़र प्रकृति की एक अनोखी कारीगरी है जो संयोगवश हुई कई सिलसिलेवार घटनाओं के कारण बनी है। प्राकृतिक वरण का अनुशासन ऐसे संयोगों को किसी व्यवस्थित मुकाम पर पहुंचा देता है।

हर शाम शहर के बाहर पहाड़ी पर चक्कर लगाना मेरा प्रिय शौक है। वहां तेज़ बहती हवा में कोई बाज़ शिकार की खोज में बिना डैने हिलाए तैरता रहता है। जैसे ही ज़मीन पर कोई चूहा दिखाई देता है, वह तीर के समान तेज़ी से नीचे आकर अचूक तरीके से अपने शिकार को झपट लेता है। बाज़ की आंख प्रकृति का वह नायाब करिश्मा है जो मानव निर्मित किसी भी आधुनिक कैमरे को मात दे सकती है।

कैमरे के समान आंख में भी प्रकाश का अपवर्तन करके उसे एक स्थान पर फोकस करने वाले लेंस हैं, आंख के अंदर आने वाली प्रकाश की मात्रा को नियंत्रित करने वाले झरोखे हैं, और ऐसे पर्दे हैं जिन पर बिम्ब बन सकता है।

स्पष्ट है कि बाहर की दुनिया में होने वाली गतिविधियों को फिल्म पर कैद करना मानव द्वारा बनाए गए कैमरे की संरचना का, कार्यप्रणाली का उद्देश्य होता है। आधुनिक कैमरे की कार्यक्षमता के पीछे विज्ञान का ज़बरदस्त योगदान है। इस विज्ञान के पीछे जो प्रेरणा है वह भी स्पष्ट है। उसी प्रकार, यह भी समझ में आने वाली बात है कि बाज़ की आंख की संरचना का आधार एक स्पष्ट छवि बनाना है। यह उद्देश्यपूर्ण संरचना बनी कैसे? जैव विकास का अध्ययन करने वालों के सामने यह सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है।

इस प्रश्न का उत्तर आजकल विज्ञान में सर्वमान्य तो है, किंतु वह काफी जटिल भी है। उसकी समझ बनाने के लिए आनुवंशिकता (यानी गुणधर्मों के एक से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचने) की गहरी समझ ज़रूरी थी। मगर उन्नीसवीं सदी में डार्विन के समय में यह पता नहीं चला था कि एक पीढ़ी के गुणधर्म दूसरी पीढ़ी में कैसे पहुंचते हैं। उस समय डार्विन सहित सब वैज्ञानिक मानते थे कि वंशानुगत गुणधर्म को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में ले जाने वाला पदार्थ एक द्रव के रूप में होता है और माता-पिता के द्रव मिलकर अगली पीढ़ी के गुणधर्मों का निर्धारण करते हैं। ज़ाहिर है कि इस तरह द्रवों के मिलने से हर पीढ़ी में विविधता आधी रह जाएगी।

डार्विन के सामने एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह था कि यदि विविधता हर पीढ़ी में आधी रह जाती है तो वह कुछ पीढ़ियों में समाप्त क्यों नहीं हो जाती? दूसरा महत्वपूर्ण प्रश्न यह था कि क्या किसी जीव द्वारा उसके जीवन में उपार्जित गुणधर्म अगली पीढ़ी में पहुंचते हैं? गौरतलब है कि जीवधारियों के गुणधर्म दो प्रकार के होते हैं। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में अपने आप आने वाले गुणधर्म वंशानुगत गुणधर्म कहलाते हैं। इसके विपरीत किसी जीवधारी के जीवन काल में उसके द्वारा हासिल किए गए गुणधर्म उपार्जित गुणधर्म कहलाते हैं। यदि माता-पिता के बालों का रंग काला होने के कारण बच्चे के बाल भी काले रंग के हों तो वह वंशानुगत गुणधर्म होगा, किंतु भारी हथौड़ा चलाने के कारण किसी व्यक्ति की भुजाओं की मांसपेशियां विकसित हो जाती हैं तो उसे उपार्जित गुणधर्म कहेंगे।

डार्विन से पहले जैव विकास के क्षेत्र में अग्रणी काम कर चुके लैमार्क का मत था कि वंशानुगत गुणधर्म संस्कारों की वजह से बदल जाते हैं और यही जैव विकास की सबसे महत्वपूर्ण प्रेरणा है। जब-जब बदलती परिस्थिति के कारण जीवधारियों के सामने नई चुनौतियां उभरती हैं, तब-तब वे उनसे निपटने का प्रयास करते हैं। इस जद्दोजहद में उनकी संरचना किसी उद्देश्य के अनुसार निर्मित होती है। लैमार्क ने इसका एक उदाहरण भी दिया था जो काफी मशहूर है।

मान लीजिए कि किसी जिराफ ने बड़े प्रयास के साथ

अपनी गर्दन को तान कर अधिक लंबा कर लिया तो यह उपार्जित गुणधर्म उसकी संतानों में आ जाता है। कई पीढ़ियों तक लगातार ऐसा होता रहे तो अधिकाधिक लंबी गर्दन वाले जिराफ बनते जाएंगे। लैमार्क की सोच थी कि संस्कार-जनित गुणधर्म और स्वभाव उचित दिशा में बदलते जाते हैं और जैव विकास की धारा बहती रहती है। डार्विन ने इस विचार को आंशिक रूप से स्वीकार तो कर लिया था, किंतु उनके अनुसार गुणधर्मों में संस्कार-जनित परिवर्तन बहुत महत्वपूर्ण नहीं होते। उनके अनुसार जैव विकास के पीछे असली चालक शक्ति कुछ और ही थी जिसे उन्होंने प्राकृतिक वरण कहा।

मेंडल थे तो डार्विन के समकालीन, किंतु उनके जीवनकाल में उनके द्वारा आनुवंशिकता पर किए गए महत्वपूर्ण काम की पूरी तरह अनदेखी हुई और उस काम की पहचान बीसवीं सदी की शुरुआत में, उनकी मृत्यु के बाद ही हुई। मेंडल ने यह सुझाव दिया था कि आनुवंशिकता का वहन करने वाले कण ठोस होते हैं। बाद में इन्हीं को जीन्स नाम दिया गया और आज यह पता चल गया है कि ये जीन डीएनए के अणुओं के रूप में होते हैं। जीन ठोस होने के कारण द्रवों की तरह आपस में मिल नहीं जाते, उनकी विविधता बनी रहती है, और इस प्रकार डार्विन की एक समस्या का निराकरण हो गया।

अब बची संस्कार-जनित गुणधर्मों के वंशानुगत होने की बहस। इस संदर्भ में वाइसमैन नामक वैज्ञानिक ने डार्विन की मृत्यु के बाद, किंतु मेंडल का शोधकार्य उजागर होने से पहले, यह प्रमाणित कर दिया था कि बहुकोशिकीय जीवों में शरीर की सामान्य कोशिकाओं और प्रजनन से सम्बंधित शुक्राणुओं और अंडाणुओं का आपस में कोई सम्बंध नहीं होता। जीवधारी के जीवनकाल में उसके अनुभवों से, संस्कारों से शरीर की सामान्य कोशिकाओं में परिवर्तन हो सकता है, किंतु ये परिवर्तन प्रजनन से सम्बंधित कोशिकाओं पर कोई असर नहीं डालते। इस कारण संस्कार-जनित परिवर्तन अगली पीढ़ी में नहीं पहुंच सकते। आजकल यही सिद्धांत मान्य है और यह ज्ञात है कि शारीरिक गतिविधियों के कारण डीएनए में हुए परिवर्तन अगली पीढ़ी में नहीं पहुंच सकते; केवल दुर्घटनावश प्रजनन सम्बंधी कोशिकाओं (यानी शुक्राणु व अंडाणु) के डीएनए की रासायनिक संरचना में हुए परिवर्तन यानी उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) ही अगली पीढ़ी में पहुंच सकते हैं।

वाइसमैन के स्पष्टीकरण के बाद भी यह बहस जारी रही कि आनुवंशिकी और संस्कारों का परस्पर सम्बंध क्या है। इस बहस के पटाक्षेप के लिए यह निर्विवाद रूप से प्रमाणित होना आवश्यक था कि डीएनए ही आनुवंशिकता का वाहक है। इस सवाल का जवाब जोशुआ लेडरबर्ग नामक वैज्ञानिक ने बहुत बुद्धिमत्तापूर्ण तरीके से ढूंढा। आनुवंशिकी का अध्ययन करने के लिए बैक्टीरिया बहुत उम्दा जीव होते हैं। इन्हें एक साधारण कांच की प्लेट पर आसानी से पनपाया जा सकता है। किसी विशिष्ट बैक्टीरिया की संतानों को एक प्लेट पर से दूसरी प्लेट पर स्थानांतरित किया जा सकता है, उनके आनुवंशिक गुणधर्मों का अध्ययन किया जा सकता है।

लेडरबर्ग ने अपने प्रयोग के लिए बैक्टीरिया का यह गुणधर्म चुना कि वे स्ट्रेप्टोमायसिन नामक एंटीबायोटिक से मारे जाते हैं या उसका प्रतिरोध कर सकते हैं। उन्होंने एंटीबायोटिक से मारे जाने वाले बैक्टीरिया से शुरुआत की और एक प्लेट पर ऐसे अनेक बैक्टीरिया को पनपने दिया। फिर उनकी प्रतिलिपि दूसरी प्लेट पर बनाई। अब उन्हें यह पक्के तौर पर पता था कि कौन किसकी हूबहू प्रतिलिपि है और दोनों प्लेटों पर हूबहू एक समान जेनेटिक संरचना वाले सम्बंधी कौन हैं। फिर उन्होंने पहली प्लेट को प्रयोग के लिए चुना और उस पर एंटीबायोटिक डाला। इसका परिणाम यह हुआ कि इस प्लेट में मौजूद बैक्टीरिया के सामने स्ट्रेप्टोमायसिन का प्रतिरोध करने की चुनौती आ गई। स्ट्रेप्टोमायसिन का प्रतिरोध कर सकने वाले उत्परिवर्तन यदि एंटीबायोटिक डालने के बाद बने होंगे तो वे दूसरी प्लेट पर नहीं पाए जाएंगे। इसके विपरीत, यदि इस प्रकार के उत्परिवर्तन संयोगवश पहले से ही रहे होंगे तो वे दूसरी प्लेट पर भी पाए जाएंगे, जिस पर एंटीबायोटिक नहीं डाला गया था। लेडरबर्ग ने यह दिखा दिया कि दूसरी प्लेट के बैक्टीरिया में भी पहली प्लेट के समान ही स्ट्रेप्टोमायसिन

का प्रतिरोध करने की क्षमता रखने वाले बैक्टीरिया थे। इससे यह प्रमाणित हुआ कि प्रतिरोध का गुणधर्म केवल संयोगवश ही बैक्टीरिया में आया था, न कि बदली हुई परिस्थिति की चुनौती के कारण।

इसमें शक नहीं कि जैव विकास की दिशा निर्धारित करने में परिस्थिति-जन्य चुनौतियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। किंतु ऐसा नहीं है कि ऐसी चुनौतियों से सामना होने पर उनके समाधान के रूप में वांछित परिवर्तन हो जाते हैं। पूरी तरह संयोगवश हुई त्रुटियों के कारण अलग-अलग गुणधर्म प्रकट होते रहते हैं। कई बार इनके कारण जीवधारियों में दोष आ जाते हैं, किंतु कभी-कभी अधिक सक्षम, अधिक गुणवान अवस्थाएं भी बन सकती हैं। यदि ऐसे उपयोगी उत्परिवर्तनों के कारण वह जीवधारी परिस्थिति से बेहतर ढंग से जूझने में सक्षम, अधिक कार्यक्षम बन गया, तो उसका प्रजनन तेज़ी से होने लगेगा। तो उस प्रजाति में ऐसे उपयोगी उत्परिवर्तन युक्त सदस्यों की संख्या बढ़ती जाएगी और धीरे-धीरे, शायद सैकड़ों पीढ़ियों बाद, पूरे समुदाय में ऐसे परिवर्तित जीन्स समाहित हो जाएंगे। यही वह प्राकृतिक वरण की प्रक्रिया है जिसका खुलासा डार्विन ने किया था। ***(स्रोत फीचर्स)***

अगले अंक में....

स्रोत अप्रैल 2015
अंक 315

- **क्या बंदर अपना अक्स पहचानते हैं?**
- **संसार - स्वार्थियों का बाज़ार**
- **जलापूर्ति का निजीकरण और विरोध**
- **बेघर लोगों के जीवन की रक्षा कैसे हो?**
- **कारखाने में बनती त्वचा**